शक्तिपात

मनस चेतना केन्द्र, जोधपुर 5/-

एस-सीरिज

आशीर्वाद

डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली

एस-सीरिज

संकलन,सम्पादन : नन्दकिशोर श्रीमाली

प्रकाशक

मनस चेतना केन्द्र

डॉ० श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी

जोधपुर - 342001 (राजस्थान)

फोन : 0291-32209, फेक्स : 0291-32010

प्रथम संस्करण : चैत्र नवरात्रि 1995

मूल्य : 5/-

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान पत्रिका से साभार लेख

अनुक्रमणिका

दो शब्द

अरविन्द प्रकाशन द्वारा कुछ माह पूर्व ही लघु पुस्तकें प्रकाशित करने की अभिनव योजना प्रारम्भ की गई थी। प्रथम दो सेट अत्यधिक लोकप्रिय होने के कारण एस-सीरिज के अन्तर्गत इस तृतीय सेट को एक प्रकार से समय से पूर्व ही प्रकाशित करना पड़ रहा है, अभी तक आध्यात्मिक और साधना-जगत् के कौतूहलों एवं रोचक विवरणों से भरी पुस्तकें इस रूप में प्रकाशित नहीं हुई थीं, किन्तु इस नूतन प्रयास द्वारा एक नई परम्परा का प्रादुर्भाव हुआ, जिससे **पाठक वर्ग ने भी बोझिलता और उबाऊ शास्त्रीय विवरणों के स्थान पर सरल और सहज भाषा में प्रामाणिक विवरणों के साथ वास्तविक अनुभूतियों को पढ़कर लाभ प्राप्त किया,** और वह भी सब कुछ मनोरंजक व सरस ढंग से।

हमारा प्रयास रहा है कि रोचकता व यथार्थपरकता का सुखद समन्वय कर पाठक वर्ग में साधना के प्रति नई धारणा विकसित की जाए। प्रथम दो सेट की हाथोंहाथ बिक्री हो जाना इस प्रयास की सफलता को सूचित करता है।

वास्तव में आज भी पाठक वर्ग अच्छे व ज्ञानात्मक साहित्य के लिए आग्रहशील है ही। अन्तर रुचियों में नहीं आया है वरन् अन्तर यह हो गया है कि अब समय की न्यूनता होने के कारण उसके पास समय नहीं है कि वह जटिल व गम्भीर अध्ययन कर सके। ये लघु पुस्तकें इसी समस्या का निदान करने में सहायक हैं, इनमें उन्हीं साधना विधियों का प्रामाणिक व अनुभव सिद्ध वर्णन किया गया है,

जो कि शास्त्रीय ग्रन्थों में अन्यथा ३० व ४० पृष्ठों में प्राप्त होता है।

इस प्रस्तुत सेट में भी पूर्व दो सेट की भांति ही आध्यात्मिक व व्यवहारिक जीवन की स्थितियों को साथ लेते हुए आठ पुस्तकें प्रस्तुत की जा रही हैं, जिससे पाठक का बहुविध मनोरंजन हो सके — **'मैं सुगन्ध का झोंका हूं'** पूज्यपाद गुरुदेव के प्रवचनों पर आधारित श्रेष्ठ आध्यात्मिक पुस्तक है, **'बगलामुखी साधना'** में शत्रु संहार एवं अनिष्ट निवारण की प्रामाणिक विधियां दी गई हैं, **'शक्तिपात'** व्यक्ति के अन्दर निहित परालौकिक ज्ञान की क्षमता को स्पष्टता से उजागर करती है, **'सनसनाहट भरा सौन्दर्य'** सौन्दर्य साधना से सम्बन्धित विशिष्ट व व्यवहारिक पुस्तक है, **'श्री यंत्र साधना'** जीवन में अतुलनीय सम्पदा को प्राप्त करने व उसे स्थायी बनाकर रखने का मार्ग स्पष्ट करती है, भगवान गणपति का भारतीय जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है, और इन्हीं की प्रामाणिक साधना-उपासना **'गणपति साधना'** के अन्तर्गत प्रस्तुत की जा रही है, **'सरस्वती साधना'** के अन्तर्गत देवी के त्रिगुणात्मक स्वरूपों में से विशिष्ट वरदायक स्वरूप का वर्णन उपयोगी साधनाओं सहित निहित है, **'पारदेश्वरी साधना'** स्वर्ण निर्माण की प्रक्रिया में आधारभूत देवी की साधना विधि है।

इस प्रकार यह तृतीय सेट भी पूर्व के दो सेट की ही भांति सुविज्ञ पाठकों का स्वस्थ मनोरंजन करने के साथ - साथ ज्ञान-लाभ कराने में तथा व्यवहारिक जीवन में सहायक सिद्ध होगा, ऐसी ही हमारी मनोकामना है और समस्त पाठकों के प्रति शुभकामना भी।

- प्रकाशक

छठी इन्द्रिय में छिपी हैं आश्चर्यजनक शक्तियां

अमेरिका के राष्ट्रपति विक्ट्रस की पत्नी को भयंकर बीमारी हो गयी, डॉक्टरों ने हाथ झटक दिए और उन्होंने स्पष्ट रूप से बता दिया कि अब इनके बचने की कोई उम्मीद नहीं है।

पर विक्ट्रस घुटने के बल बैठ कर प्रभु यीसू के चरणों में झुक गए और प्रार्थना की– "चाहे तू मुझे किसी भी प्रकार की विपत्ति दे, पर मेरी पत्नी को इस रोग से मुक्त कर दे।"

उसी क्षण से उसकी पत्नी ठीक होने लगी और महीने भर में वह पूरी तरह से तरोताजा हो गई, जो काम डॉक्टर और आधुनिक दवाएं न कर सकीं, वह विक्ट्रस की मनःशक्ति ने कर दिखाया।

इतिहास में बाबर और हुमांयू का किस्सा तो सर्वविदित है, हुमांयू मृत्यु शैया पर था और उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं थी। बाबर, हुमांयू के खाट के पास ही घुटने के बल झुक गया और अल्लाह से प्रार्थना की, कि चाहे तू मेरी जान ले ले, पर हुमांयू को बचा दे, और उसी दिन से हुमांयू ठीक होने लगा और बाबर धीरे-धीरे बीमार होता हुआ समाप्त हो गया, पर इस घटना से बाबर की मनःशक्ति का पता चल जाता है।

अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक **इयान ऑर्थर** प्रसिद्ध चिन्तक और वैज्ञानिक हैं, जिन्होंने छठी इन्द्रिय या मनःशक्ति के बारे में कई पुस्तकें लिखी हैं, और उनकी पुस्तकों को वैज्ञानिकों ने गम्भीरता से लिया है। इयान ऑर्थर ने बताया है कि **प्रत्येक मनुष्य के शरीर में तीन प्रकार की शक्तियां होती हैं, शारीरिक शक्ति, भौतिक शक्ति और मनःशक्ति।** शारीरिक शक्ति का तो मनुष्य प्रयोग करता ही है, भौतिक शक्ति से भी वह भली-भांति परिचित है, परन्तु मनःशक्ति के बारे में वह कुछ भी नहीं जानता, जबकि उपरोक्त दोनों शक्तियों से भी ज्यादा प्रबल और तुरन्त प्रभाव देने वाली मनःशक्ति है, जिसके माध्यम से असम्भव कार्यों को भी सम्भव किया जा सकता है।

यह मनःशक्ति एकाग्रता के माध्यम से सम्भव है, जब मन एकाग्र होता है, तो उसमें विशेष पॉवर या शक्ति आ जाती है। अमेरिका के वैज्ञानिकों ने परीक्षणों के माध्यम से मनःशक्ति

को आंक कर यह माना है, कि इस शक्ति के द्वारा गुप्त और सुदूर रहस्यों का पता चल सकता है। इयान ऑर्थर ने उच्चकोटि के वैज्ञानिकों से खचाखच भरे हॉल में मनःशक्ति के कई प्रयोग सम्पन्न करके दिखाए, उन्होंने चलती हुई घड़ी का पेन्डुलम स्थिर करके दिखा दिया, आधा किलो वजन के पदार्थ को बिना छुए या स्पर्श किए उसे अपने स्थान से हटा कर दिखा दिया, यही नहीं अपितु **मि० मिलवर्न** ने एक कोने में जाकर एक कागज पर अरबी भाषा में कुछ लाइनें लिखीं और उस कागज को अपनी जेब में डाल दिया, इयान ऑर्थर ने मनःशक्ति को एकाग्र कर उस कागज पर लिखी हुई इबारत को ज्यों का त्यों उच्चारण करके सुना दिया, जबकि इयान ऑर्थर को अरबी भाषा नहीं आती।

इयान ऑर्थर की पुत्री **लीना ऑर्थर** भी इस क्षेत्र में अत्यन्त सफल है, उसने मनःशक्ति को एकाग्र कर चलती हुई नाड़ी स्पन्दन को बन्द कर दिया और लगभग पांच मिनट तक ऐसा करके वैज्ञानिकों को हैरत में डाल दिया था, उसने अपनी इसी शक्ति के बल से सामने वाले वैज्ञानिकों के मन में क्या-क्या विचार घुमड़ रहे हैं, एक-एक कर के बता दिया।

रूस ने इस सम्बन्ध में काफी प्रयोग किए हैं, और वहां के वैज्ञानिकों ने इस मनःशक्ति के प्रभाव को देख कर आश्चर्य व्यक्त किया है, पिछले दिनों रूस के प्रमुख पत्र "इजवेतिया" में महत्त्वपूर्ण समाचार प्रकाशित हुआ था कि रूस

ने मानव सहित उपग्रह अन्तरिक्ष में भेजा था, जो कि पृथ्वी से सैकड़ों मील दूर ऊंचाई पर उड़ रहा था, रूस की प्रमुख वैज्ञानिक महिला **इवानोव** ने अपने मन को एकाग्र कर उस उपग्रह में बैठे पायलेट को कुछ आदेश दिए और उस पायलेट ने वैसा करना शुरू कर दिया, जब बेतार के तार के माध्यम से उससे सम्पर्क कर पूछा गया कि उसने उपग्रह का रास्ता क्यों बदला, तो उसने बताया कि मुझे आदेश दिया गया है और उस आदेश के अन्तर्गत ही मैंने ऐसा किया है।

इससे रूस के वैज्ञानिक चकित रह गए, इसकी तो अनन्त सम्भावनाएं उन्होंने अनुभव कीं, इसके माध्यम से तो किसी भी देश के उपग्रह को आज्ञा दी जा सकती है, और मनचाहा कार्य सम्पन्न करवाया जा सकता है।

अमेरिका ने सन् ६२ में ही इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर ली थी, और जब **नील आर्मस्ट्रांग** ने पहली बार चन्द्रमा पर कदम रखा, तो अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक और नासा में कार्यरत **वियनीव** ने आर्मस्ट्रांग को मनःशक्ति के द्वारा बिना किसी वैज्ञानिक उपकरण की सहायता के पांच प्रश्न पूछे और आर्मस्ट्रांग ने वैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से उन पांचों प्रश्नों के उत्तर दिए।

इस घटना से यह स्पष्ट हो गया कि मनःशक्ति के द्वारा संदेश प्रेषण सम्भव है। अमेरिका की विख्यात गुप्तचर संस्था

सी० आई० ए० के लिए तो यह वरदान स्वरूप ही है। सी० आई० ए० के तत्कालीन निर्देशक **हूब** ने कहा था कि अब हम ज्यादा कुशलता से कार्य कर सकते हैं, और अपने एजेन्टों को समाचार दे सकते हैं या समाचार प्राप्त कर सकते हैं, इसके लिए न तो किसी लिखित पत्र की जरूरत है और न बातचीत को बीच में ही किसी और देश द्वारा सुने जाने की आशंका, इसके बाद तो अमेरिका ने इस क्षेत्र में काफी कुछ कार्य किया है।

पिछले दिनों रूस से भागे हुए गुप्तचर **इविल** ने अमेरिका में रहस्य को उजागर करते हुए बताया कि अब रूसी वैज्ञानिक अन्तरिक्षयान से सम्पर्क मनःशक्ति के द्वारा ही करते हैं, अब रेडियो संचार प्रणाली उनके लिए पुरानी पद्धति हो चुकी है, वे अन्तरिक्षयान का नियंत्रण इस अतीन्द्रिय शक्ति के द्वारा ही कर रहे हैं, यही नहीं, अपितु इस शक्ति के माध्यम से वे अपनी पनडुब्बियों से भी सम्पर्क बनाए हुए हैं।

जापान के **डा० हिरोसी मोतोयामा** ने इस पद्धति पर कार्य किया है, उन्होंने बताया है कि आने वाला युग मनःशक्ति के माध्यम से ही पहिचाना जाएगा। डॉ० हिरोसी मोतोयामा की बात पूरा विश्व ध्यान से सुनता है, उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **"सिक्स्थ सेन्स"** में ही निष्कर्ष निकालते हुए बताया है कि तंत्र में बताए हुए मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, आज्ञा, अनाहत और सहस्रार चक्रों के माध्यम से ही मनःशक्ति एकाग्र की जा

सकती है, जिसके द्वारा दूसरे के मन में स्थित विचारों को पढ़ा जा सकता है, उन्होंने तंत्र और विज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करते हुए अनुभव किया कि **जब साधक का ध्यान मणिपुर चक्र पर होता है, तो मनःशक्ति भौतिक ऊर्जा में परिवर्तित होने लगती है, और जब साधक का ध्यान आज्ञा चक्र पर होता है, तो व्यक्ति के शरीर का चुम्बकीय क्षेत्र बारह गुना बढ़ जाता है तथा जब उसका ध्यान अनाहत चक्र पर होता है, तो अंधेरे में उन फोटो इलेक्ट्रिक सेल में प्रकाश उत्पन्न होने लग जाता है।** वास्तव में ही अब मनःशक्ति या अतीन्द्रिय शक्ति कोई रहस्य नहीं रहा है, इसे भली प्रकार से समझा जा सकता है, यदि प्रार्थना, ध्यान, मनन और मंत्र-जप के माध्यम से मन को एकाग्र कर चक्रों को जाग्रत कर लें, तो स्वतः ही यह अतीन्द्रिय शक्ति या जिसे "अल्फा तरंगें" कहते हैं, जाग्रत हो जाती है, और इसके माध्यम से असम्भव को सम्भव किया जा सकता है, ऐसा व्यक्ति सैकड़ों मील दूर बैठे हुए व्यक्ति को देख सकता है, उसके मन की गोपनीय बातों को जान सकता है, उसे मनचाहा "सजेशन" या आज्ञा दे सकता है, जिसके माध्यम से उसे बुरी आदतों से बचाया जा सकता है, इस शक्ति के माध्यम से रोगों पर नियन्त्रण पाया जा सकता है, और वह सब कुछ किया जा सकता है, जो सामान्यतः मनुष्य के वश में नहीं।

★★★

तिब्बत को संसार की छत कहा गया है, क्योंकि यह एक रहस्यमय देश रहा है और बहुत पुराने समय से तंत्र साधना, योग विद्या और अन्य रहस्यात्मक चमत्कारों की कहानियां इसके बारे में पूरे संसार में फैलती रही हैं। जिस प्रकार हमारे देश में तांत्रिक साधना पुराने समय से ही प्रचलित रही है और साथ ही साथ अनेक अलौकिक और चमत्कारपूर्ण घटनाओं का सम्बन्ध इन साधनाओं से रहा है, ठीक इसी प्रकार तिब्बत के बारे में भी कहा जाता है कि वहां पर तंत्र का केन्द्र है और अभी तक भी वहां हजारों ग्रंथ बौद्ध मठों में सुरक्षित

* * *

हैं, जिनमें अलौकिक तांत्रिक विद्याओं का समावेश है।

कुछ समय पहले लन्दन से एक पुस्तक प्रकाशित हुई थी, जिसका नाम "दी थर्ड आई" है और इसके लेखक **टी० लोबसंग रम्पा** हैं। इन्होंने एक के बाद एक कई पुस्तकें प्रकाशित की हैं, उन सब में तिब्बत का इतना सूक्ष्म और सटीक विवरण है कि पढ़कर आश्चर्य होता है। "दी थर्ड आई" पुस्तक ने इंगलैंड और अमेरिका में एक प्रकार से तहलका मचा दिया है, और इन दिनों इस पुस्तक की वहां विशेष चर्चा है।

लोबसंग ने लिखा है कि **यह मेरा असली नाम नहीं है, अपितु मैंने इन पुस्तकों को लिखने के लिए ही किसी अंग्रेज के शरीर का उपयोग परकाया प्रवेश के द्वारा किया है, और इस छद्‌म नाम से मैंने ये पुस्तकें लिखी हैं। जब मेरा कार्य सम्पन्न हो जाएगा, तो मैं पुनः इस शरीर को छोड़कर वापिस तांत्रिक क्रियाएं सम्पन्न करने के लिए चला जाऊंगा।**

जिनको तंत्र साधना का थोड़ा बहुत भी ज्ञान है, वे तिब्बत और लामाओं के बारे में थोड़े बहुत रूप में अवश्य जानते होंगे। लामा तिब्बत के अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण धर्म गुरु माने जाते हैं, और इनको अलौकिक सिद्धियां प्राप्त होती हैं। कुछ लामा तो सैकड़ों बार परकाया प्रवेश कर अपने कार्य की सिद्धि कर लेते हैं। ये लामा भूतकाल को स्पष्टता के साथ देख सकते हैं, और ठीक इसी प्रकार भविष्य काल को भी देखने में समर्थ होते

हैं, इनके लिए कुछ भी असम्भव नहीं होता।

हो सकता है लोबसंग रम्पा कोई तिब्बती लामा रहे हों और उन्होंने तिब्बत के तांत्रिक ज्ञान को यूरोप में प्रचलित करने के लिए किसी अंग्रेज के शरीर का सहारा ले, परकाया प्रवेश कर इन पुस्तकों की रचना की हो, कुछ भी हो यह पुस्तक अपने-आप में अविश्वसनीय घटनाओं से परिपूर्ण है, यद्यपि लेखक ने इस पुस्तक में दावा किया है कि इसकी प्रत्येक घटना सम्पूर्ण, सत्य और अनुभूत है।

लेखक के अनुसार उसका जन्म तिब्बत की राजधानी 'ल्हासा' के एक धनी परिवार में हुआ था, और यह परिवार तिब्बत के शासन प्रबन्ध में भी सहयोगी रहा है, इसलिए उसकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध विशेष रूप से हुआ और उस पर विशेष रूप से निगरानी रखी गई।

लेखक जब सात-आठ वर्ष का हुआ, तो परम्परा के अनुसार कुछ महत्त्वपूर्ण ज्योतिषियों को आमंत्रित किया गया, और उन ज्योतिषियों ने बालक के ग्रहों का अध्ययन तथा नक्षत्रों की गणना कर बताया कि यह बालक आगे चलकर असाधारण व्यक्ति होगा, तथा इसके द्वारा कई महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित होंगे, फलस्वरूप ज्योतिषियों की राय मानकर उसके पिता ने लेखक को तिब्बत के एक मठ में भेज दिया, जहां पर विशेष शल्य क्रिया और तांत्रिक साधनाओं का

अभ्यास कराया जाता है।

यह मठ अत्यन्त पवित्र और महत्त्वपूर्ण माना जाता है, इस "चकपोरी" मठ में उसकी विशेष स्तर की शिक्षा प्रारम्भ हुई। एक वर्ष में इस बालक ने परिश्रम कर कुछ विशेष साधनाएं सम्पन्न कीं, और जब यह आठ वर्ष का हुआ, तो इस मठ के गुरु **"मिग्यार डोडप"** ने लेखक को अपने पास बुलाया और बताया कि कल तुम्हारी वर्षगांठ है, अतः कल ही तुम्हारी **"तीसरी आंख"** खोलने का उपयुक्त और सर्वोत्तम समय है।

वस्तुतः मानव का शरीर तो मात्र बाहरी आवरण है, पर इस पूरे शरीर और जीवन को जो संचालित करता है, उस शक्ति को 'आत्मा' कहा जाता है। आत्मा अपने-आप में स्वतन्त्र और सामर्थ्य युक्त होती है, तथा मृत्यु के बाद वह इस शरीर को छोड़कर अलग हो जाती है। तांत्रिक साधनाओं के अनुसार जिस प्रकार मृत्यु के बाद आत्मा शरीर से अलग हो जाती है, उसी प्रकार **नींद के समय भी आत्मा अस्थायी रूप से शरीर से अलग होकर पूरे संसार में विचरण कर लेती है, और इसीलिए स्वप्न में व्यक्ति को कई भविष्यकालीन घटनाओं का बोध हो पाता है।** यही नहीं, अपितु वहां के गुरु ने लोबसंग को इससे भी महत्त्वपूर्ण बातें बताईं और समझाया कि आत्मा को नियन्त्रित करने के लिए तथा भविष्यकालीन घटनाओं को देखने

के लिए शल्य क्रिया द्वारा "तीसरी आंख" खोलना अनिवार्य है।

उसको यह बताया गया कि इतनी छोटी उम्र में यह सौभाग्य प्राप्त कर लेना उसके पूर्वजन्म के पुण्यों का ही फल है, और जब शल्य क्रिया द्वारा तीसरी आंख खुल जाएगी, तो वह आत्मा के स्वरूप को प्रत्यक्ष रूप से देख पाएगा और किसी भी मनुष्य के बाहरी आवरण को बेध कर वह उसके असली रूप को पहिचान सकेगा। यह अवश्य है कि शल्य क्रिया द्वारा तीसरा नेत्र खोलने में कुछ शारीरिक कष्ट अवश्य होता है, परन्तु लोबसंग इस महत्त्वपूर्ण सौभाग्य प्राप्ति के लिए किसी भी प्रकार का शारीरिक कष्ट उठाने के लिए तैयार था।

आठवीं वर्षगांठ के दिन लोबसंग को शल्य क्रिया के लिए तैयार किया जाने लगा। सबसे पहले उसे शुद्ध जल से स्नान कराया गया, उसके ललाट पर अनेक प्रकार की औषधियां लगाकर उसके सिर को साफ कर दिया गया, जिससे कि सिर पर किसी प्रकार का कोई बाल न रहे। इसके बाद उसके पूरे माथे पर कुछ विशेष जड़ी-बूटियां घिसकर लगाई गई और पूरे दिन उसे एक अंधेरे कमरे में बन्द रखा गया, शाम को गुरु **'मिग्यार डोडप' के साथ दो और लामा उसके कमरे में उपस्थित हुए और उसे बताया गया कि तुम्हारे सिर पर छेद करके तीसरी आंख खोली जाएगी,** इससे तुम्हें असह्य शारीरिक यंत्रणा भोगनी

पड़ सकती है, पर यह यंत्रणा ही तुम्हारे लिए सौभाग्यदायक है, क्योंकि इस यंत्रणा से तुम उस सिद्धि की दिशा में अग्रसर हो सकोगे, जो कि तुम्हें इस संसार में अद्वितीय पुरुष बना सकेगी। एक प्रकार से यह तुम्हारी कठिन परीक्षा है, और मुझे विश्वास है कि तुम अवश्य ही इस परीक्षा में सफलता प्राप्त करोगे। इतना ध्यान रखना कि तुम्हारा शरीर "तुम" नहीं हो, इसलिए शरीर की यंत्रणा का प्रभाव अपने मन पर मत पड़ने देना।

लोबसंग प्रत्येक प्रकार की परीक्षा और यंत्रणा सहन करने के लिए पहले से ही तैयार था। गुरु की बातों से तो उसे और भी अधिक बल मिला, उसने शल्य क्रिया के लिए अपने-आप को शारीरिक और मानसिक दोनों रूपों से तैयार कर लिया।

कुछ समय बाद शल्य क्रिया आरम्भ हुई। एक लम्बा पैने दांतों वाला गोल आरी जैसा एक चमकीला औजार निकाला और उसके आगे के भाग को गर्म किया जाने लगा। जब उस आरी का अगला नुकीला हिस्सा लाल सुर्ख हो गया, तो लामा ने उस तपती हुई आरी को लोबसंग के ललाट के बीचोंबीच रख दिया, कुछ ही समय में यह नुकीला हिस्सा चमड़ी और मांस को बेध कर अन्दर घुसने लगा और उसके ललाट की हड्डी को काटने लगा। वास्तव में यह यंत्रणा असह्य थी, परन्तु

लोबसंग ने लिखा है, कि कोई विशेष तकलीफ नहीं हुई।

जब ललाट में छेद हो गया, तो लामा ने आरी को बाहर निकाल दिया और उस सुराख में एक विशेष प्रकार की लकड़ी की शलाका डाल दी गई, जो कि अपने-आप में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थी, और विशेष प्रकार के मंत्रों से सिद्ध थी, ज्यों ही शलाका का मस्तिष्क के एक विशेष भाग से स्पर्श हुआ, त्यों ही लोबसंग को एक अनिवर्चनीय प्रकाश का अनुभव हुआ, उसे लगा, जैसे हजारों सूर्य एक साथ उग आए हों, उसे हवा में एक विशेष दिव्य सुगन्ध का अनुभव हुआ और उसने महसूस किया कि वह अब तक जो कुछ नहीं देख पा रहा था, वह भी देख सकने में समर्थ हो गया है। वह इन परिवर्तनों से मन ही मन पुलकित था, और उसकी प्रसन्नता का आभास उसके चेहरे पर भी साफ दिखाई दे रहा था। उसके गुरु ने जब उसका दिव्य पुलकित चेहरा देखा, तो उससे स्नेह पूर्वक कहा— लोबसंग ! अब तुम सामान्य मानव-जीवन से बहुत ऊंचे उठ गए हो, और तुमने लगभग हम लोगों का स्तर प्राप्त कर लिया है, अब तुम्हें वह दिव्य-दृष्टि मिल गई है, जिसके फलस्वरूप तुम समय को बेधकर हजारों वर्षों का भविष्य देख सकते हो और किसी भी व्यक्ति को वास्तविक रूप से जान सकते हो।

गुरु के अमृत युक्त इन शब्दों को सुनकर लोबसंग को असीम सन्तोष और आनन्द हुआ, उसके ललाट के छेद में

लकड़ी की जो शलाका डाल दी गई थी, उसे निकाला नहीं गया, अपितु उसके ऊपर विशेष प्रकार की दिव्य औषधियों का लेप कर पट्टी बांध दी गई।

लोबसंग को इसी अवस्था में सत्रह दिन रहना पड़ा, अठारहवें दिन गुरु की उपस्थिति में लोबसंग के ललाट से वह पट्टी हटा दी गई। ज्यों ही वह पट्टी हटी, लोबसंग ने देखा कि उसका सारा शरीर एक विशेष आकर्षण से युक्त हो गया है, उसके चेहरे के चारों तरफ एक सुनहरा प्रभामण्डल बन गया है, और उसका मन एक विशेष पवित्रता से ओत-प्रोत हो गया है, यद्यपि उसका शरीर कुछ कमजोर हो गया था, परन्तु उसकी बुद्धि अत्यन्त तेज और पैनी हो गई थी।

गुरु के साथ ज्योंही लोबसंग बाहर निकला तो उसने आंगन में जिस पहले व्यक्ति को देखा, तो लोबसंग को लगा कि वह व्यक्ति धुएं से घिरा हुआ है और उसके चारों तरफ आग की चिनगारियां निकल रही हैं। लोबसंग घबरा गया, परन्तु गुरु ने उसे बताया कि यह व्यक्ति न तो आग में जल रहा है और न धुंए से घिरा हुआ है, अपितु **इसके मन में जो पाप और कपट हैं वही धुंए के रूप में तथा घृणित मनोभाव ही आग की लपटों के रूप में तुम्हें दिखाई दे रहे हैं, इस प्रकार लोबसंग ने पहली बार अपनी सिद्धि के द्वारा किसी व्यक्ति के अंतःकरण को जाना और अनुभव किया,** धीरे-धीरे उसका अभ्यास बढ़ता गया और

कुछ ही समय बाद उसे इतनी शक्ति प्राप्त हो गई कि वह किसी भी व्यक्ति को देखते ही उसके अंतःकरण के विचार, भावनाएं और उसके भूत और भविष्य को जान लेता था।

कुछ समय बाद उसकी दीक्षा का समय आया, तो उस मठ के सर्वोच्च लामा ने उसे दीक्षा देते हुए कहा— लोबसंग! तुम्हें एक दुर्लभ जीवन मिला है, तुम्हें एक आश्चर्यजनक सिद्धि प्राप्त हुई है, तुम्हें इसका उपयोग स्वार्थ सिद्धि के लिए नहीं करना है, अपितु हमेशा परोपकार के लिए ही करना है, तुम किसी भी व्यक्ति को देखते ही उसके भूत और भविष्य को, उसके आगे और पीछे के जीवन को देख पाओगे, परन्तु इस बात का ध्यान रखना कि तुम्हें कोई ऐसा मन्तव्य स्पष्ट नहीं करना है, जिससे किसी की हानि हो, साथ ही साथ बिना दीक्षा दिए किसी व्यक्ति के जीवन क्रम को भी बदलने की जरूरत नहीं है, क्योंकि अदृश्य और अलौकिक शक्तियों को यह अभीष्ट नहीं होता।

तिब्बत के परम्परागत रूप में दलाई लामा वहां ईश्वर के अंश माने जाते हैं, और वहां के नियमों के अनुसार किसी भी उच्च सिद्धि प्राप्त लामा को दीक्षा के बाद दलाई लामा की सेवा में उपस्थित होना अनिवार्य होता है, अतः लोबसंग को भी पोटाला महल में दलाई लामा की सेवा में उपस्थित किया गया, परम्परा के अनुसार उसने घुटनों के बल झुक कर तीन बार उनका अभिवादन किया, तब दलाई लामा ने उसको बैठने

का संकेत देते हुए कहा— तुम्हारे पूर्वजन्मों के सभी वृत्तान्त मुझे ज्ञात हैं, और तुम पिछले जीवन में भी साधु रहे हो, तुम्हें जो दिव्य-दृष्टि प्राप्त हुई है वह अपने-आप में असाधारण है, फिर भी तुम्हें आगे के जीवन में कुछ कठोर परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा, और उन देशों में जाना पड़ेगा, जिनका कि तुमने नाम भी नहीं सुना होगा, परन्तु तुम्हें वहां जाना है, और इन विद्याओं से उन लोगों को परिचित कराना है।

इसके बाद दलाई लामा की आज्ञा से लोबसंग और उसके गुरु को लगभग सात वर्षों तक उस पोटाला महल में निवास करना पड़ा, और उसके बाद ही लोबसंग ने इन घटनाओं को लिपिबद्ध किया।

लोबसंग ने इन संस्मरणों को लिपिबद्ध करते हुए लिखा है कि मेरे देश की **आध्यात्मिक, तांत्रिक साधना और दूरवर्ती मन को प्रभावित करने की क्षमता के ज्ञान के बारे में सामान्य व्यक्तियों को यह सब पढ़कर विश्वास नहीं होगा, परन्तु मेरे लिए ये सभी बातें उतनी ही सत्य हैं, जितनी की प्रातःकाल पूर्व से सूर्य उगता है।**

मेरे देश में लामाओं के पास अद्‌भुत सिद्धियां हैं, बर्फ की चट्टानों पर निर्वसन बैठकर अपने शरीर का तापमान इतना अधिक बढ़ा लेते हैं कि उस गर्मी से बर्फ पिघलने लग जाती है। कुछ लामा जमीन से ऊपर उठकर शून्य में स्थित रह सकते

हैं, और साधना में संलग्न बने रह सकते हैं, ये सारी बातें सामान्य बुद्धि के लिए कपोलकल्पित या आश्चर्यजनक भले ही हों, परन्तु जो तंत्र को जानता है, वह मेरी बातों पर पूरा-पूरा विश्वास करेगा।

तंत्र की धारणा है कि शरीर एक प्रकार का पिंजरा है, जिसमें आत्मा निवास करती है, आवश्यकता केवल सीखने की है कि इस पिंजरे का द्वार खोला जाए और आत्मा को उसके बाहर लाया जा सके तथा कुछ समय बाद पुनः इस पिंजरे में आत्मा को प्रवेश दिया जा सके। ऐसा होने पर आत्मा शरीर से बाहर निकलकर पूरे विश्व में कहीं पर भी भ्रमण कर सकती है, और स्वेच्छा से विचरण करती हुई सब कुछ देख सकती है।

शरीर का बन्धन टूट जाने पर आत्मा इस बात के लिए स्वतन्त्र हो जाती है कि वह किसी भी लोक में या परलोक में विचरण कर सके और उन लोगों को देख सके। साधना के द्वारा व्यक्ति अपने शरीर से आत्मा को बाहर निकाल कर किसी भी स्थान पर भेज सकता है। यह आत्मा काल और स्थान को बेध सकती है, अतः इसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं होता।

लोबसंग ने लिखा है कि **इस प्रकार की सिद्धियां तिब्बत के अलावा भारत के योगियों के पास भी हैं, जो कि सामान्य और साधारण अवस्था में रहते हैं,** और इन सिद्धियों के माध्यम से वे किसी भी लोक से सम्पर्क स्थापित कर सकते

हैं, काल को बेधकर सैकड़ों वर्ष बाद की होने वाली घटनाओं को बखूबी देख सकते हैं।

पन्द्रह वर्ष की आयु के बाद लोबसंग को और कई विविध साधनाओं के मार्ग से गुजरना पड़ा, तब एक दिन दलाई लामा ने उसे बुलाकर गम्भीरता पूर्वक कहा— लोबसंग! अब वह समय आ गया है, जबकि तुम्हें मृत्यु से साक्षात्कार करना पड़ेगा, पर यह मृत्यु एक अलग प्रकार की मृत्यु होगी और तुम इन सबको अपनी आँखों से भली प्रकार देख सकोगे।

इसके बाद लोबसंग को परकाया प्रवेश की साधना सम्पन्न कराई गई और बताया गया कि किस प्रकार से वह इस शरीर को सुरक्षित रखता हुआ अपनी आत्मा को दूसरे मृत शरीर में प्रवेश दे सकता है, और कुछ वर्षों बाद जब जी चाहे पुनः इसी शरीर में लौट सकता है।

इसके बाद गुरु की आज्ञानुसार लोबसंग ने एक तिब्बती मठ में अपने शरीर से आत्मा को अलग किया और एक मृत विद्वान् अंग्रेज के शरीर में आत्मा को प्रवेश देकर उन कार्यों को सम्पन्न किया, जो कि उसके गुरु की आज्ञा थी। उसकी आज्ञा से ही लोबसंग ने इन विशिष्ट ग्रंथों की रचना की, जिससे कि पाश्चात्य देश तिब्बत और भारत की यौगिक क्रियाओं से परिचित हो सके, तांत्रिक साधनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सके और इन रहस्यमय सिद्धियों के बारे में जान सके।

वस्तुतः परकाया प्रवेश अपने-आप में एक श्रेष्ठ सिद्धि है, और आज भी तिब्बत में तथा भारत में ऐसे योगी और साधक विद्यमान हैं, जो कि इन क्रियाओं के माध्यम से इच्छानुसार कार्य सम्पादन कर सकते हैं।

जिन साधकों ने तिब्बती योग विद्याओं को सीखा है, और भारतीय साधनाओं के सम्पर्क में हैं, वे इस बात को जानते हैं कि परकाया प्रवेश साधना दोनों ही स्थानों पर एक ही प्रकार से है और एक ही तरीके से इन साधनाओं को सम्पन्न किया जाता है, यह अलग बात है कि **तिब्बत में शल्य क्रिया द्वारा सहस्रारभेदन होता है, जबकि भारतीय साधक कुण्डलिनी जागरण के माध्यम से सहस्रारभेदन कर दिव्य-दृष्टि प्राप्त करने में समर्थ हो पाते हैं।**

★★★

हम अपना तीसरा नेत्र खोल सकते हैं

प्रत्येक मानव-शरीर में एक तीसरा नेत्र भी होता है, जिसके माध्यम से भूत, भविष्य और वर्तमान को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। हमने पढ़ा है कि भगवान शंकर का तीसरा नेत्र खुला हुआ है, और इसी से उन्हें सब कुछ ज्ञात रहता है। योगी लोग भी अपना तीसरा नेत्र खोल लेते हैं, और वे सही अर्थों में त्रिकालज्ञ बन जाते हैं।

मनुष्य का तीसरा नेत्र अधिकतर बन्द रहता है, क्योंकि हम कभी भी उसको खोलने का प्रयत्न नहीं करते। पिछले सैकड़ों वर्षों से हमने यह प्रक्रिया बन्द कर दी है, जिसकी वजह से हमारी यह ग्रंथि एक प्रकार से सुप्त हो गई है। यदि हम शरीर के किसी अंग विशेष का उपयोग कुछ वर्षों के लिए न करें,

तो वह अंग कमजोर होकर निष्क्रिय हो जाता है, और बाद में हम प्रयत्न करके भी उस अंग का उपयोग नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए कुछ हठ योगी अपने दाहिने हाथ को आकाश की तरफ उठाए रहते हैं और साल-दो साल बाद वह हाथ ठूंठ की तरह हो जाता है, बाद में प्रयत्न करने पर भी वह हाथ वापिस नीचे नहीं आ पाता।

हमारे पूर्वजों को भूत-भविष्य का ज्ञान रहता था, क्योंकि उनका तीसरा नेत्र खुला हुआ था। बाद में धीरे-धीरे हमने उस ग्रंथि का उपयोग करना बन्द कर दिया। सैकड़ों वर्षों पूर्व व्यक्ति अपनी इच्छा से अपने कान हिला सकता था, परन्तु उसे इसकी आवश्यकता नहीं थी, अतः उसने कान हिलाना बन्द कर दिया, फलस्वरूप वह ग्रंथि निष्क्रिय हो गई और आज हम चाहते हुए भी कान को नहीं हिला सकते, ठीक यही स्थिति हमारे तीसरे नेत्र की हुई है। हमने उस ग्रंथि का उपयोग करना सैकड़ों वर्षों से छोड़ दिया है, फलस्वरूप वह निष्क्रिय - सी हो गई है, पर **यदि हम प्रयत्न करें और उस ग्रंथि को उत्तेजना दें, तो निश्चय ही वह सक्रिय हो सकती है, और सक्रिय होते ही उसके माध्यम से भूत और भविष्य को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।**

यही नहीं, अपितु यदि किसी व्यक्ति की यह ग्रंथि सक्रिय हो जाती है, तो उसकी आने वाली पीढ़ी की भी ग्रंथि आंशिक रूप से सक्रिय रहेगी, और अल्प प्रयत्न से ही भूत

और भविष्य को देखने की क्षमता पैदा हो जाएगी।

जिस प्रकार से हम दोनों आंखों से सामने स्थित घटना या पदार्थ को देख सकते हैं, ठीक उसी प्रकार हम तीसरे नेत्र या ग्रंथि से, जो स्थान और काल से परे है, कहीं पर भी घटित होने वाली घटना को देख सकते हैं। इतना ही नहीं, कई वर्षों बाद की घटनाओं को भी वर्तमान क्षण में देख सकते हैं।

यह प्रक्रिया कठिन नहीं है, यद्यपि यह गोपनीय अवश्य रही है। योगी लोग एक विशेष विधि से इस ग्रंथि को उत्तेजित और सक्रिय कर देते हैं। फलस्वरूप वह ग्रंथि काम करने लग जाती है और इस प्रकार से वे सही रूप में दिव्य-चक्षु-सम्पन्न बन जाते हैं। इसके लिए यदि साधक चाहें तो अपना तीसरा नेत्र खोलने के लिए प्रयत्न कर सकते हैं। मेरे कई शिष्यों को इसमें सफलता मिली है। नीचे जो विधि बतलाई गई है, वह अपने-आप में अनुभूत और प्रामाणिक है।

साधक को पद्मासन में बैठ जाना चाहिए और अपने दोनों नेत्रों को बन्द कर देना चाहिए। इसके बाद मुंह के अन्दर जीभ को उलट कर तालू की ओर चढ़ा लेनी चाहिए, फिर ध्यान को दोनों भृकुटी के मेल स्थान से अर्थात् नाक की जड़ से दो अंगुल ऊपर जमाना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह ध्यान सिर के बाहरी भाग पर न होकर भीतरी भाग पर होना चाहिए। ध्यान के समय **'नमः शिवाय'** मंत्र का

जप मन ही मन करते रहना चाहिए।

इससे पूर्व साधक को अपनी दोनों आंखें खोल कर नाक के अग्रभाग को देखने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए नाक के अग्रभाग पर कोई छोटा-सा लाल बिन्दु लगाकर उसे अपनी दोनों आंखों से देखने का अभ्यास करना चाहिए। जब यह बिन्दु साफ दिखाई देने लग जाए, तब दूसरे चरण में, भृकुटी के मध्य में एक लाल बिन्दु लगा कर अपनी दोनों आंखों से उसे देखने का अभ्यास करना चाहिए। जब यह बिन्दु दिखाई देने लगे, तब साधक को आंखें बंद कर जीभ को तालू से सटाकर पीछे लिखे प्रयोग को सम्पन्न करना चाहिए।

इस प्रकार सतत अभ्यास करने से तीसरे नेत्र से सम्बन्धित ग्रंथि उत्तेजित हो जाती है, और कुछ समय बाद ही वह सक्रिय हो जाती है। इसके बाद साधक को किसी भी व्यक्ति को देखते ही उसका भूत और भविष्य उसकी आंखों के सामने साकार हो जाता है, उसको संसार में किसी भी स्थान पर घटित होने वाली घटना साफ दिखाई देने लग जाती है। उसका मन एकाग्र हो जाता है और स्वास्थ्य उत्तम रहने के साथ-साथ उसे देव-दर्शन प्राप्त होने लग जाता है। वस्तुतः यह साधना अत्यन्त सरल होते हुए भी कठिन है। इसके लिए साधकों को असीम धैर्य से सतत अभ्यास करते रहना चाहिए, तभी उन्हें सफलता प्राप्त होती है और वे दिव्य-चक्षु सम्पन्न हो पाते हैं।

★★★

शक्तिपात

शुष्क जीवन में अमृतधारा का प्रवाह

शक्तिपात के बारे में काफी कुछ सुना जाता है, पर इस बारे में कहीं पर भी स्थिति स्पष्ट नहीं है, **कि शक्तिपात क्या है, क्यों जरूरी है, इससे क्या लाभ है आदि-आदि?** साधारण गृहस्थ ही नहीं, अच्छे-अच्छे साधक, योगी भी इसका समुचित उत्तर देकर जिज्ञासु को संतुष्ट नहीं कर पाते।

इस दुर्बोध और गूढ़ विषय को यहां सरल, स्पष्ट भाषा में प्रस्तुत किया जा रहा है, जिससे इसके बारे में सम्यक् ज्ञान हो सके।

मानव-जीवन ईश्वर की तरफ से इस सृष्टि को सबसे बड़ा वरदान है। सौभाग्य से ही यह मानव-जीवन प्राप्त होता

है, 'विवेक चूड़ामणि' में भगवान शंकराचार्य ने कहा है -

जन्तूनां नर जन्म दुर्लभमतः पुंस्त्वं ततो विप्रता,
तस्माद्वैदिक धर्ममार्ग परता विद्वत्वमस्मात्परम्।
आत्मानात्म विवेचनं स्वनुभवो ब्रह्मात्मना संस्थितिः;
व्यक्तिनां शत जन्म कोटि सुकृतैः पुण्यैर्विना लभ्यते।।

अर्थात् अत्यन्त सूक्ष्म जन्तु से विकास होते-होते दुर्लभ मनुष्य जन्म-लाभ होता है, फिर इसके आगे मनुष्य में भी पुरुष जन्म है। इस पुरुष जन्म में भी जिसमें विप्रता या ब्राह्मणत्व के गुण आ जाते हैं और उसके आगे भी जिसमें धर्म मार्गपरता, विद्वत्व और मंत्र-तंत्र के प्रति ज्ञान, रुचि आदि का उद्‌भव होता है, वह वास्तव में ही धन्य जीवन कहलाता है।

दुर्लभ मानव-जीवन प्राप्त करके भी जो मनुष्य (या स्त्री) आत्ममुक्ति के साधन हेतु प्रयत्न नहीं करता, उससे बड़ा आत्महन्ता और कौन हो सकता है?

इतः कोन्वस्ति मूढात्मा यस्तु स्वार्थे प्रमाद्यति।
दुर्लभं मानुषं देहं प्राप्य तत्रापि पौरुषम्।।

इस मानव-जीवन में आत्ममुक्ति या ब्रह्म से साक्षात्कार वही सौभाग्यशाली प्राप्त कर सकता है, जिसको इस जीवन में ही सद्‌गुरु की प्राप्ति हो जाती है।

सद्‌गुरोः संप्रसादेऽस्य प्रतिबंध क्षयस्ततः।
दुर्भावनातिरस्काराद्विज्ञानं मुक्तिदं क्षणात्।।

शक्तिपात क्या है?

मानव-जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य आत्म-साक्षात्कार या मोक्ष प्राप्ति है, जब तक मनुष्य अपने-आप में ब्रह्म की स्थापना या स्थिति प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक उसे बार-बार जन्म लेकर भव जन्म रोग, शोक, दुःख, संताप आदि भोगते रहना पड़ता है।

जब आत्मा प्रयत्न करके पूर्ण स्वरूप प्राप्त करती है, तो वह ब्रह्म स्वरूप होने लगती है, पर इस ब्रह्म स्वरूपता से पहले शरीर स्थित मल-पाक होना आवश्यक है, मल-पाक से तथा इन्द्रियजन्य दोष समाप्त होने पर, चित्त पर से मल का आवरण हट जाता है, अनुग्रह शक्ति का उदय होता है, फलस्वरूप शांत और निर्मल आत्मा के दर्शन होने लगते हैं।

शक्तिपात गुरु के द्वारा ही सम्भव है। जब गुरु देखता है कि प्रयत्न करने पर भी शिष्य या साधक कुण्डलिनी जागरण में या मंत्रसिद्धता में सफल नहीं हो रहा है, और उसके शरीर में उतनी शक्ति उत्पन्न नहीं हो रही है, जितनी कि साधना की सफलता के लिए जरूरी है, तब गुरु अपने शरीर में स्थित ऊर्जा-शक्ति में से कुछ शक्ति को शिष्य के शरीर में प्रवाहित करते हैं, इस क्रिया को ही **"शक्तिपात"** कहते हैं।

वशिष्ठ ने श्री राम को स्पष्ट शब्दों में बताया था, कि शक्तिपात केवल गुरु कृपा से ही सम्भव है, और गुरु कृपा शिष्य द्वारा सेवा से ही प्राप्त हो सकती है –

परिपक्वमला ये तानुत्सदन हेतु शक्ति पातेन।
यदा यस्य तदा यस्य विमुक्तिर्नात्र संशयः।।

वस्तुतः सद्गुरु अपनी करुणा के वशीभूत होकर शिष्य की सेवा से प्रसन्न हो 'शक्तिपात' के द्वारा उसे "स्वयंवत्" बना लेते हैं। श्री शंकराचार्य ने इस सम्बन्ध में 'शतश्लोकी' के प्रारम्भ में ही एक सुन्दर वर्णन किया है–

दृष्टान्तो नैव दृष्ट स्त्रिभुवन जठरे सद्गुरोर्ज्ञान दातुः,
स्पर्शश्चेदत्र कल्प्यः सनयति यदहो स्वर्ण तामश्म सारम्।
न स्पर्शत्वं तथापि श्रित चरणयुगे सद्गुरुः स्वीयशिष्ये,
स्वीयं साम्यं विधत्ते भवति निरुपम स्तेन वा लौकिकोऽपि।।

अर्थात् इस त्रिभुवन में गुरु की उपमा देने लायक कोई दृष्टान्त नहीं है, गुरु को पारस की उपमा नहीं दी जा सकती, क्योंकि पारस तो मात्र सोना ही बनाता है, उस वस्तु को पारस नहीं बना सकता, परन्तु सद्गुरु तो अपने शिष्य को स्वयं के समान ही बना लेता है।

शक्तिपात करते समय गुरु अपने पास जो साधना एवं सिद्धियों का समुद्र है, वह शिष्य में उड़ेल देता है, और शिष्यों में ऐसी क्षमता पैदा कर देता है, कि उनमें उन सिद्धियों को समाहित करने की शक्ति आ जाए। शिष्य चाहे मूर्ख हो, अल्पज्ञानी हो, अज्ञानी हो या कमजोर हो, पुरुष हो या स्त्री हो, गुरु जिस में भी पात्रता देखता है, और उसकी सेवा से प्रसन्न होता है, उस पर शक्तिपात कर देता है।

शक्तिपात करते समय गुरु जब शिष्य को अपने गले लगाता है, तब उसके शरीर में कम्पन होने लग जाता है, आनन्द के अतिरेक से आंसू बहने लग जाते हैं, पसीना छूट जाता है, सारा शरीर रोमांचित हो उठता है, तथा शिष्य एक अनिवर्चनीय प्रकाश से भर जाता है।

देहपातस्तथा कम्पः परमानंद हर्षणे।
स्वेदो रोमांच इत्येच्छक्तिपातस्य लक्षणम्।।

इससे यह स्पष्ट है, कि सद्गुरु प्रसन्न हो जाते हैं, तो वे अपनी सारी शक्ति एक क्षण में ही अपने शिष्य को दे सकते हैं, यही बात भगवद्भक्त **संत तुकाराम** एक प्रसंग में इस प्रकार कहते हैं–

"सद्गुरु के बिना रास्ता नहीं मिलता, इसलिए सब काम छोड़कर पहले उनके चरण पकड़ लो, वे तुरन्त अपने जैसा बना लेते हैं, इसमें उन्हें जरा भी देर नहीं लगती।"

गुरु कृपा से जब शक्ति प्रबुद्ध हो उठती है, तब

साधक को आसन, प्राणायाम, मुद्रा आदि करने की कुछ भी आवश्यकता नहीं रहती, प्रबुद्ध कुण्डलिनी ऊपर ब्रह्मरन्ध्र की ओर जाने के लिए छटपटाने लगती है, उसके इस छटपटाने में जो कुछ क्रियाएं अपने-आप होती हैं, वे ही आसन, मुद्रा, बंध और प्राणायाम हैं, शक्ति का मार्ग खुल जाने के बाद ये सब क्रियाएं अपने-आप होती हैं, और उनसे चित्त को अधिकाधिक स्थिरता प्राप्त होती है।

ऐसे साधक देखे गए हैं, जिन्होंने कभी स्वप्न में भी आसन प्राणायामादि के विषय में नहीं जाना था, न ग्रंथों में देखा था, न किसी से कोई क्रिया ही सीखी थी, पर जब उनमें शक्तिपात हुआ, तब वे इन सभी क्रियाओं को अन्तःस्फूर्ति से ऐसे करने लगे, जैसे उन्हें अनेक वर्षों का अभ्यास हो। योग शास्त्र में वर्णित विधि के अनुसार इन सब क्रियाओं का उनके द्वारा ही अपने-आप होना देखकर बड़ा आश्चर्य होता है, जिस साधक के द्वारा, जिस क्रिया का होना आवश्यक है, वही क्रिया उसके द्वारा होती है, अन्य नहीं। जिन क्रियाओं को करने के लिए अन्य साधकों को बहुत काल कठोर अभ्यास करना पड़ता है, उन आसनादि क्रियाओं को शक्तिपात से युक्त साधक अनायास ही कर सकते हैं। यथावश्यक रूप से प्राणायाम भी होने लगता है, और दस-पंद्रह दिन की अवधि के अन्दर दो-दो मिनट का "कुम्भक" अनायास ही लगने लगता है, इस प्रकार होने वाली यौगिक क्रियाओं से साधक को कोई कष्ट नहीं होता, किसी अनिष्ट के भय का कोई कारण नहीं रहता, क्योंकि प्रबुद्ध शक्ति स्वयं ही ये सब क्रियाएं साधक से उसकी प्रवृत्ति के अनुरूप करा लिया करती है।

शक्तिपात से प्रबुद्ध होने वाली शक्ति के द्वारा साधक से जो क्रियाएं होती हैं, उनसे वह शरीर रोग रहित हो जाता है, बड़े-बड़े असाध्य रोग भी भस्म हो जाते हैं, इससे गृहस्थ साधक बहुत लाभ उठा सकते हैं, शक्ति का जागना जहां एक बार हुआ, वहां फिर वह शक्ति स्वयं ही साधक को परम पद की प्राप्ति कराने तक अपना काम करती रहती है, इस बीच साधक के जितने भी जन्म बीत जाएं, एक जागी हुई कुण्डलिनी फिर कभी सुप्त नहीं होती।

मानसिक शान्ति, जीवन की उन्नति एवं पूर्णता चाहने वालों के लिए इस काल में शक्तिपात जैसा सुगम साधन अन्य कोई नहीं है, इसलिए ऐसे शक्ति सम्पन्न गुरु जब सौभाग्य से किसी को प्राप्त हों, तब उसे चाहिए कि ऐसे गुरु की कृपा - प्रसाद प्राप्त करे। इस प्रकार गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए साधक को जीवन की पूर्णता के लिए सदा प्रयत्नवान होना चाहिए।

प्रसादे सति देवेशो दुर्ज्ञेयोऽपि सुरर्षभाः।
शक्यते मनुजैर्द्रष्टुं प्रत्यंगात्म तया सदा।।

★★★

जब मुझ पर शक्तिपात हुआ

उत्तराखण्ड हिमालय के सुविख्यात योगी, वेद-वेदान्ताचार्य, हिमालय योगी संघ के प्रवर्त्तक "प्राकाम्य" ग्रंथ के **महाभाष्यकार योगीराज मन्महेन्द्रनाथ** भारतवर्ष के प्रसिद्ध योगी हैं, काफी वर्ष पहले उन्होंने पूज्य श्रीमाली जी से दीक्षा प्राप्त कर शक्तिपात लिया था, उस समय उन्हें जो अनुभव प्राप्त हुआ, उन्होंने निम्न शब्दों में व्यक्त किया है--

"मेरे जीवन का वह स्वर्णिम क्षण था, जब पूज्यपाद स्वामी जी गुरुदेव श्री श्रीमाली जी ने मुझे अपनाकर मेरी कातर प्रार्थना स्वीकार करते हुए मुझ पर शक्तिपात करने की सहमति प्रदान की।"

मैं श्रीमाली जी को तब से जानता था, जब वे साधु जीवन में निखिलेश्वरानन्द जी के नाम से विख्यात थे.

* * *

यह ईश्वर की अनुकम्पा है कि मुझे उनके चरणों में काफी समय तक सेवा करने का अवसर मिला, मेरे जीवन की साध थी, कि मुझ पर शक्तिपात पूज्यपाद गुरु जी के द्वारा ही हो, मैं जब भी संकोचवश धीरे से अपना मन्तव्य उनके सामने प्रगट करता, वे जानकर भी अनजान बने रहते, मैंने साहस बटोरकर एक - दो बार खुले शब्दों में भी याचना की, पर वे टाल गए, इसके बाद मैं अपना यही भवितव्य समझ कर चुप रह गया और उनकी सेवा में ही अपने-आप को लीन कर दिया।

वह प्रभात मेरे जीवन का अवर्णनीय प्रभात था — एक दिन मैं संध्या-वन्दनादि करके उठा ही था कि सामने गुरुदेव खड़े दिखाई दिए सौम्य, सरल, शान्त, दिव्य, अद्भुत वर्चस्वयुक्त. . . मैं उठ कर उनके चरणों में लिपट गया।

तभी मुझे आवाज सुनाई दी— मन्महेन्द्र! आज मैं शक्तिपात करूंगा, अभी जा पुनः स्नान करके आ जा।

मैं हर्षातिरेक में विह्वल हो गया, बरसों की साध पूरी होने जा रही थी, स्वामी श्रीमाली जी से मुझे शक्तिपात मिलेगा, स्मरण कर पागल-सा हो गया, मेरे मन में खुशियां महक रही थीं, और मेरे नेत्रों से हर्षातिरेक में अश्रु छलक उठे।

मैंने नदी तट पर जाकर स्नान किया, शुद्ध काषाय वस्त्र धारण किए और गुरु चरणों में नतमस्तक हो गया।

पूज्य गुरुदेव व्याघ्रचर्म पर पद्मासन में बैठे थे, मैं

उनके सामने ही बैठ गया, गुरु आज्ञा से मैंने ऊपर का वस्त्र हटा लिया और नीचे गेरुआ वस्त्र धोती की तरह पहिन लिया।

संन्यासीवत् होते हुए भी गुरुदेव ने मुझे यज्ञोपवीत पहिनने को दिया, ललाट पर भस्म लगाने की आज्ञा दी और पद्मासन पर शान्त स्थिर निश्चल बैठ, गुरु-ध्यान करने को कहा। मेरे गुरु तो साक्षात् मेरे सामने सशरीर खड़े थे, फिर ध्यान क्या करता? नेत्र बंद करने पर भी तो उन्हीं की छवि सामने साकार थी।

मेरा पद्मासन बंधा हुआ था और आंखें अधखुली थीं, मैंने मन ही मन गुरुदेव को ध्यान कर अपनी इन्द्रियों को खींच, उन्हें गोलक में स्थापित किया तथा भूत, भविष्य और निकट दूर की वस्तुओं में दौड़ने वाले चित्त को हृदय में स्थिर किया। पूर्वाभ्यासानुसार अपने प्राण और अपान को सम कर के सुषुम्ना को संचालित किया। कुछ समय मेरे मन में विकल्प उठते रहे, परन्तु ज्यों ही गुरुदेव के हाथ का हल्का-सा स्पर्श मेरे सिर पर हुआ कि वे संकल्प-विकल्प धीरे-धीरे नष्ट हो गए। इन्द्रियों को इन्द्रियों के विषयों से पृथक कर के बाहर के और अन्दर के भेद को दूर कर दिया।

मेरी आंखें आधी खुली थीं और मैं अपने सामने गुरुदेव को देख रहा था, परन्तु ऐसा लग रहा था कि मैं अपने आसन पर नहीं बैठा हूं, अपितु हवा में स्थिर बैठा हूं। मेरे सामने

ही गुरुदेव खड़े हैं, उन्होंने सर्वप्रथम "भूतशुद्धि" करके अपने दोनों हाथ आकाश की तरफ उठा लिए। मैंने देखा कि उनके हाथ विद्युत की तरह प्रकाशित हो रहे हैं, और उनके दोनों हाथों में आकाश तथा दसों दिशाओं से विद्युत एकत्र हो रही है। विद्युत की यह सनसनाहट तथा प्रकाश मैं अपनी आंखों से देख रहा था। कुछ ही क्षणों तक यह स्थिति रही, गुरुदेव का चेहरा लाल सुर्ख हो गया, ऐसा लग रहा था मानो वे सारी शक्ति और विद्युत प्रवाह को अपने चेहरे और हाथों में पुञ्जीभूत कर रहे हैं, दूसरे ही क्षण उन्होंने वे दोनों हाथ मेरे सिर पर रख दिए।

हाथ का स्पर्श होते ही ऐसा लगा, जैसे मेरा शरीर किसी विद्युत तार से टकरा गया हो और दूसरे ही क्षण मेरा सारा शरीर झनझना गया, एक क्षण में मन के 'संकल्प-विकल्प' समाप्त हो गए और हृदय के अन्दर ऐसा अनुभव हुआ, जैसे धीरे-धीरे सूर्य का उदय हो रहा हो, मन में स्थित सारा अन्धकार एकबारगी ही समाप्त हो गया, और कुछ क्षणों बाद हृदय के अन्दर एक अत्यन्त रमणीय तेजपुंज प्रगट हुआ, यद्यपि यह तेजपुंज अपार था, तथापि उनके अनन्त स्वरूप में पूर्णता थी। मेरा मन इस तेजपुंज के साथ निर्विषय होकर लय को प्राप्त हो गया।

एक क्षण के लिए इस लय के कारण वृहद आकाश उपस्थित हुआ, जिसमें पूरे ब्रह्माण्ड को मैं स्पष्ट रूप से देख रहा था। मैं बिलकुल सही-सही रूप में आकाश, पृथ्वी, सूर्य

लोक, चन्द्र लोक आदि घूमते हुए देख रहा था। यह बोध करते ही कुछ जड़ समाधि-सी अनुभव हुई, परन्तु मेरा मन इस जड़ता और स्थिरता दोनों ही अवस्थाओं को पार करके एक ही क्षण में चित्त स्वरूप में स्थित हो गया, पर दूसरे ही क्षण मेरा मन उस स्थिति से च्युत हो गया। बार-बार उस पर आरूढ़ होते रहने से उसका आनन्द रस मिला, और आस्वादन करने वाला मैं उस अनिवर्चनीय आनन्द में मग्न हो गया।

वस्तुतः यह रसमयता ही सविकल्प समाधि है, इससे मेरा ध्यान त्रिपुटी में स्थिर हो गया और मन में अपार शान्ति का सागर लहराने लगा, एक ऐसा सागर, जिसमें न चैत्य है और न चेत्य, केवल चित् ही चित् है, जैसे तरंग फेन आदि से रहित अनन्त शान्त महासागर हो, जिसमें बाहर-भीतर, स्थूल-सूक्ष्म, आदि-अनादि का भेद नहीं किया जा सकता, वैसी ही वह स्थिति थी।

यह स्थिति कितने समय तक रही मैं नहीं कह सकता, परन्तु ऐसा लग रहा था कि मैंने एक अनन्त लय में अपने-आप को लीन कर दिया है और मेरा स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं रहा है।

जब मेरी समाधि खुली, तब मैंने अनुभव किया कि मैं उसी आसन पर स्थिर हूं, मेरे सामने गुरुदेव बैठे हुए मंद-मंद मुस्करा रहे हैं, मेरे मन का सारा भ्रम, सारा संदेह, सारी समस्याएं,

सारा दुःख एकबारगी ही समाप्त हो गया, और मैं उस अस्तित्व में अपने-आप को लीन करने में समर्थ हो गया था, जो कि जीवन का परम सुख और परमानन्द है।

भावातिरेक में मेरी आंखों से आंसू निकल पड़े, वास्तव में यह अनुभव मेरे जीवन का सर्वोच्च अनुभव था, मैं उठकर प्रणिपात रूप में गुरु चरणों में लेट गया। मेरे सिर पर और मेरी पीठ पर गुरुदेव का शीतल हाथ घूम रहा था, और मैं अपने आंसुओं से उनके चरणों को धो रहा था।

उसके बाद तो मेरी समाधि तुरन्त लग जाती और घण्टों मैं उस परमानन्द में लीन रहता। वस्तुतः मेरे जीवन का वह सौभाग्यशाली दिन था, जब मैं इस देह से उस ब्रह्म ज्योति में अपने-आप को शक्तिपात के द्वारा लीन कर सका था।

★★★

पूरा ब्रह्माण्ड
मेरे चित्त में समा गया

श्रीमती शकुन्तला अडियार दक्षिण भारत की सुप्रसिद्ध गायिका और सामाजिक कार्यकर्त्री हैं, पूरे दक्षिण में और भारत में उनके गायन की ख्याति है - साथ ही साथ सामाजिक क्षेत्र में उन्होंने जो कार्य किया है, वह अपने- आप में आश्चर्यजनक हैं, वे चालीस से ज्यादा सामाजिक संगठनों की मंत्री है तथा उनके जीवन का प्रत्येक क्षण समाज सेवा तथा देश सेवा के लिए समर्पित है, इस स्तर पर प्रसिद्ध विदुषी श्रीमती शकुन्तला अडियार ने श्रीमाली जी से दीक्षा ली थी और शक्तिपात प्राप्त किया था . . .

इसमें कोई दो राय नहीं है कि मैंने अपने जीवन को समाज सेवा के लिए समर्पित कर दिया था, और मैं यही समझती थी कि जीवन में जितनी भी राजनीतिक और सामाजिक सेवा हो, उतना ही ज्यादा अच्छा है। यद्यपि मैंने गृहस्थ जीवन जिया है और मैं अपने गृहस्थ जीवन में पूर्णतः संतुष्ट हूं, परन्तु इस जीवन में शान्ति नहीं थी, मेरा मन हमेशा भटकता रहता था, और जब मैं एकान्त में बैठती, तो सैकड़ों तरह के विचार मेरे दिमाग में आते और पूरे मानस को व्यथित कर देते।

मैं समझती थी कि यदि मैं सब कुछ कर लूं, परन्तु यदि मेरे मन को शान्ति नहीं मिली, तो यह सब कुछ व्यर्थ है। क्या यह सारा जीवन इसी प्रकार से बीत जाएगा? हो सकता है इससे और मेरे कार्यों से लोगों को लाभ होता हो, परन्तु मैंने स्वयं के लिए, अपनी आत्मा के लिए क्या किया?

कई बार मैं अपने मन को समझाती कि इस संसार के व्यापारों से तेरा क्या प्रयोजन है, **जिसको तू आकर्षक समझ कर उसकी तरफ दौड़ रही है, वे तो दुःख के खजाने हैं, उनमें शान्ति नहीं है, तुझे इन विषवृक्षों के जंगल में जाने की अपेक्षा कल्पवृक्ष की छाया में बैठना चाहिए, जिससे कि आनन्द की प्राप्ति हो सके, शान्ति मिल सके, जीवन का अन्तिम लक्ष्य प्राप्त हो सके।**

इसी प्रकार कई बार मैं अपने मन को समझाती कि तू चाहे पाताल में जा, ब्रह्म लोक में जा, परन्तु जब तक तू अपने मूल को नहीं ढूंढ निकालेगी, तब तक तुझे जीवन में एक बूंद भी सुख की प्राप्त नहीं होगी। ये तेरी इच्छाएं ही दुःख की जननी

हैं, वह प्रिय के प्रति आकर्षण, यह तो केवल तेरी तृष्णाएं हैं, इनका हल ढूंढने तथा जीवन में सुख और शान्ति पाने के लिए जो प्रयत्न कर रही है, जिस प्रकार से तू भटक रही है, यह सब एक छलावा है और इससे कुछ भी प्राप्त नहीं होने वाला।

जिसमें सुख और शान्ति है, जिसमें शीतलता है, आनन्द है, उसके लिए तू प्रयत्न नहीं कर रही है, यह पुत्र मेरा है, यह मुझे सुख देगा, यह पति मेरे जीवन में सहायक होगा, यह तो केवल वासना है, और वासना ही तो तेरे बन्धन का हेतु है। तुझमें सामर्थ्य आनी चाहिए कि तू इन वासनाओं के आवरण को छिन्न-भिन्न कर दे, यदि ऐसा नहीं करेगी, तो जन्म और मृत्यु के चक्र में अज्ञात काल तक भटकती हुई चूर-चूर होती रहेगी। यह तो निश्चित है कि तेरा नाश अवश्यम्भावी है, फिर तू उस परमानन्द को प्राप्त करने में विलम्ब क्यों कर रही है? तुझ में अहंकार है कि तू बहुत काम कर रही है, पर यह सब व्यर्थ है, जब जीवन का अन्तिम क्षण आएगा और यह आत्मा तुझसे पूछेगी कि तूने उस परमसत्ता को प्राप्त करने के लिए क्या किया? तो तेरे पास कोई उत्तर नहीं होगा, और उस समय हाथ मलने के अलावा तेरे पास कुछ भी उपाय नहीं शेष रह जाएगा।

इस प्रकार के विचार बराबर मेरे मानस में घुमड़ते रहते, मैं चाहती थी कि मुझे योग्य गुरु मिले, जिनके चरणों में

मैं बैठ सकूं, अपने मन की व्यथा उनको कह सकूं और उनसे रास्ता ज्ञात कर सकूं, जिससे इस जीवन में ही मैं उस परम ज्योति में लीन होने में समर्थ हो सकूं, जो कि जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है।

इसी प्रकार की उधेड़बुन के दिनों में एक बार श्रीमाली जी से भेंट हुई। मुझे भेंट में ऐसा लगा कि यह सामान्य मानव है, यह मेरी समस्याओं का समाधान नहीं कर सकेगा, परन्तु दूसरी और तीसरी भेंट में मैंने अनुभव किया कि उनके पास बैठने से एक शान्ति, एक आनन्द अनुभव होता है, हो सकता है यहां पर मेरी समस्याओं का समाधान हो।

धीरे-धीरे मुझे उनके ज्ञान से, प्राणायाम की क्रियाओं से लाभ और शान्ति मिलने लगी, और कुछ वर्षों बाद ऐसा भी समय आया, जब मेरी इच्छा पूरी होने जा रही थी, उन्होंने स्वयं ही मेरे अनुरोध पर कहा, कि अब तुम उस स्थिति में हो कि शक्तिपात के द्वारा तुम्हारे चित्त को परमानन्द में लीन किया जा सके। वास्तव में ही वह दिन मेरे लिए अत्यन्त सौभाग्यशाली दिन था, जब मुझ पर शक्तिपात होने वाला था, इससे पूर्व मैं गुरु जी से दीक्षा ले चुकी थी और दीक्षा से पूर्व उन्होंने कितनी ही बार कठोर परीक्षाएं ली थीं, यह मैं ही जानती हूं, परन्तु मैं तो अपने मन में दृढ़ निश्चय कर चुकी थी कि हर स्थिति में मुझे अपने-आप पर नियंत्रण रखना है और हर परीक्षा में, हर कसौटी पर खरा उतरना ही है।

शक्तिपात के दिन मैंने व्रत रखा था, क्योंकि उस दिन मुझे आज्ञा मिली थी कि आज कुछ भी अन्न आदि नहीं लेना है। प्रातः स्नान आदि से निवृत्त होकर गुरु पूजा, इष्ट पूजा समाप्त की तथा प्रातः लगभग दस बजे गुरुदेव के सामने उनकी आज्ञा से आसन पर बैठ गई।

पद्मासन बंधा हुआ था, मेरी आंखें अधखुली थीं, उन्होंने मुझे दो मिनट का कुम्भक करने के लिए कहा, मैंने उसे पूरा किया और ॐकार का उच्चारण प्रारम्भ किया।

मेरे सामने गुरुदेव खड़े थे, परन्तु मुझे उस क्षण ऐसा लग रहा था, जैसे कोई विद्युत स्फुलिंग मेरे सामने खड़ा हो, उनका सारा शरीर तमतमा रहा था, चाह कर भी मेरी दृष्टि उनके चेहरे पर जम नहीं रही थी, उनके दोनों हाथ आकाश की तरफ उठे हुए थे, और मैं उनसे लगभग एक फुट की दूरी पर बैठी हुई थी, परन्तु उनकी तरफ से विद्युत प्रवाह बहता हुआ मेरे पूरे शरीर को, मेरे पूरे रोम-रोम को जाग्रत कर रहा है, चैतन्य कर रहा है, देखते ही देखते मेरा पूरा शरीर तप्त होने लगा, और दूसरे ही क्षण उनके दोनों हाथ मेरे सिर पर स्थिर हो गए, मेरे मुंह से ॐकार की ध्वनि दीर्घ घण्टानाद के समान उच्चरित होने लगी, और मेरी सुप्त चेतना जाग्रत होकर आकाश के समान निर्मल रूप से विस्तृत हो गई। ॐकार शब्द के साथ ही स्वतः रेचक हुआ और मेरा सारा शरीर-प्राणवायु से रहित हो गया,

यह प्राणवायु मन में स्थित आकाश में लीन हो गई, ऐसा लग रहा था कि अंतःस्थित अग्नि ने प्रज्वलित होकर मेरे सारे पाप-पुण्यमय शरीर को जला दिया है तथा मेरे प्राण स्वतः कुम्भक से स्तम्भित हो रहे हैं।

बाहर-भीतर, नीचे-ऊपर कहीं पर भी, कुछ भी क्षुद्रता दृष्टिगोचर नहीं हो रही थी, पाप-पुण्यमय शरीर को भस्म करने वाली अग्नि शान्त हो गई और पूरे शरीर में तथा आंखों के सामने श्वेत वर्ण-सा साकार हो गया। ऐसा लग रहा था कि मेरे शरीर की सारी हड्डियां कर्पूर-चूर्ण की शैया पर शयन कर रही हैं और प्रणव की तीसरी मात्रा के साथ ही स्वतः पूरक प्राणायाम हुआ, और उसी क्षण ऐसा अनुभव हुआ मानो मेरे प्राण चैतन्यता की अमृतधारा में डूब गए हों। इससे अत्यन्त शीतलता का अनुभव हुआ और मेरी प्राणवायु ने चन्द्रमण्डल का स्वरूप धारण कर लिया, यह अमृत के समान था, और दूसरे ही क्षण मेरी समाधि लग गई। समाधि में भी ऐसा लग रहा था कि मेरी भृकुटि से अमृत की धाराएं प्रवाहित हो रही हैं और पूरे शरीर को भिगो रही है। मेरे सामने कुछ ही क्षणों बाद वह अमृतधारा एक सुन्दर चन्द्रमा के समान चतुर्बाहु के रूप में प्रगट हो गई, सुन्दर शरीर, खिले हुए कमल-सी आंखें—मानो साक्षात् नारायण ही मूर्तिमान हो गए हों। मधु धारा से आप्लावित प्राणों में शरीर ने प्रवेश किया और चक्रों में विस्तारित हो कुण्डलिनी को पूर्ण कर दिया।

मैं एक अनिवर्चनीय आत्मा में लीन हो गई। मैं आज प्रयत्न करके भी उस आनन्ददायक क्षण को लेखनी के माध्यम से व्यक्त नहीं कर सकती। वस्तुतः वह आनन्द मेरे जीवन का पूर्ण सौभाग्य था, उसके बाद मेरी समाधि लगभग छः घण्टे तक लगी रही। इसके बाद तो कई बार मेरी समाधि लगी और टूटी। उस दिन के बाद से आज तक भी गुरुदेव का ध्यान करते ही मेरी समाधि कई-कई घण्टों तक की लग जाती है।

वह अनुभूति अपने-आप में अवर्णनीय है और यह मेरा सौभाग्य है कि मैं इस जीवन में ही उस परमसत्ता के दर्शन कर सकी हूं, और समाधि से कई बार उस परमसत्ता की ज्योति में अपने-आप को लीन करने में समर्थ हो सकी हूं।

इस द्वन्दात्मक, संघर्षमय संसार में भी मैं जितनी शान्ति और आनन्द अनुभव कर रही हूं, वह सब गुरुदेव की कृपा का ही फल है, मैं और मेरा पूरा परिवार उनका कृतज्ञ है, कृतज्ञ रहेगा।

★★★